Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed /Refereed Open Access Journal
Vol. 3, Issue 3, July-September, 2025
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/
ISSN : 3048-6971

हिंदी ओर भारतीय भाषाओं की साझी संवेदनागत पृष्ठभूमि और रामस्वरूप चतुर्वेदी का साहित्य चिंतन

सुजीत कुमार
(नेट/जेआरएफ- शोध शोधछात्र)
हिंदी विभाग,डी०ए-वी० कॉलेज, कानपुर.
संबद्ध:- छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर.

शोधसार:- हिंदी और भारतीय भाषाओं की साझी संवेदना के अंतर्वर्ती तथा बाह्य वर्ती तत्व विदेशी इतिहासकारों को चौंकाते रहे हैं।जिसकी भ्रांति से अनेक मत-वैमत्य भारतीय इतिहास व संस्कृति चिंतन के मध्य प्रचलित रहे हैं। समस्त भारतीय संस्कृति की अंतर्वर्ती चेतना पूर्व में अरुणोदय स्थल से लेकर पश्चिम में कच्छ के दल-दल तक, उत्तर में हिमालय से लेकर समुद्रपर्यंत एक रही है। भाषा और भौगोलिक वैविध्य के कारण स्थानीय वैविध्य भी हैं। जिसमें अनेक अंतर्विरोध भी दिखाई पड़ते हैं। इन अंतर्विरोधों के इतर भारतीय जनमानस व साहित्य की संवेदना साझी रही है। डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी इसकी उचित पहचान करते हैं कि समग्र भारतीय संवेदना 'अंतर्विरोधों का सामंजस्य ' लिए हुए है।यहाँ अंतर्विरोधों से अधिक प्राबल्य सामंजस्य सूत्रों का दिखाई पड़ता है।

बीजशब्द:- अंतर्विरोधों का सामंजस्य, सांस्कृतिक इकाई, साहित्यिक अंतर्वस्तु, शास्त्रीय भाषा, आठवीं अनुसूची, पौराणिक आख्यान, औपनिषदिक ज्ञानकांड,पुराकथा, द्वितीय महानगरीय क्रांति, आगम साहित्य,अतिशय वैयक्तिकता,साठोत्तरी साहित्य, हिंदी जाति, द्रविड़ परिवार, अर्थविकास, ध्वनि साम्य, बहुभाषा-भाषी, अस्मितामूलक वैचारिकी, व्यवस्था विद्रोह, सामंजस्य सूत्र,तराना-ए- हिंदी, सांस्कृतिक विकास प्रक्रिया।

शोध विस्तार:- भारतीय राष्ट्र एक सुसंगठित सांस्कृतिक इकाई रहा है। उत्तर से दक्षिण व पूर्व से पश्चिम तक भारत शतधिक भाषाओं -बोलियों के वैविध्य के उपरांत भी सांस्कृतिक -साहित्यिक अंतर्वस्तु के स्तर पर सदैव एक रहा है।इसकी भाषाई प्राचीनता व विविधता का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि यहाँ पर तमिल, संस्कृत, कन्नड़, मलयालम,तेलुगू, ओड़िया सहित 11भाषाएँ शास्त्रीय भाषाओं की श्रेणी में आती हैं। शास्त्रीय भाषाओं, आठवीं अनुसूची की भाषाओं, तथा विभिन्न राज्यों व अंचलों की भाषा में पर्याप्त भाषागत वैविध्य है।इसके विपरीत उनके वैदिक स्रोत, पौराणिक आख्यान, औपनिषदिक ज्ञानकांड, पुराकथा, दंतकथा,व सर्वोपरि लोककथा व लोकवृतांतों में आश्चर्यजनक समानता दिखाई पड़ती है। भाषा वैज्ञानिकों ने इस वैविध्य को भाषा,उपभाषा, बोलियों के वैज्ञानिक वर्ग में अलग-अलग रखकर भले ही विवेचन किया हो परंतु उनकी विषयवस्तु व संवेदना समूचे भारत या भारतीय उपमहाद्वीप की साझी संवेदना रही है।इसे रवीन्द्रनाथ टैगोर उचित ही'भारतीय महामानव ' की संज्ञा से विभूषित करते हैं।

प्राचीनकाल में आर्य व द्रविड़ संस्कृति का प्राधान्य संपूर्ण भारतीय राष्ट्र में देखा जा सकता है।इस युग में जनजीवन प्रधानतः या कृषि व पशुपालन पर आधारित था। आज भी भारतीय जनजीवन 46.1%जनसंख्या की कृषि पर निर्भरता के कारण कृषि व पशुपालन आधारित अपनी ग्राम्य संवेदना को ही निजी धरोहर मानता है। बौद्ध युग में द्वितीय महानगरीय क्रांति, शिल्पों व महाजनपदों के उदय से नगरीय संरचना के कतिपय स्वरूप भी उभरते हैं। मध्यकाल में इस्लामिक शासन, राजपूत राजाओं और दक्षिण भारतीय राजवंशों के समवेत शासन के दौर में साझी-समन्वयशील भारतीय संस्कृति का विकास होता है।जिसे आधुनिक युग में विविधता में एकता के रूप में विश्लेषित किया जाता है।

वेद-पुराण तथा औपनिषदिक आख्यान सभी भारतीय भाषाओं के जनमानस व साहित्य में सृजन व जीवन प्रेरणा के रूप में समादृत रहे हैं। भारतीय परंपरा के दो महाकाव्यों रामायण-महाभारत के आख्यान का व्यापक प्रभाव भारतीय भाषाओं पर दिखाई पड़ता है।सभी भारतीय भाषाओं के अपने-अपने रामायण तथा महाभारत दिखाई पड़ते हैं। इनके पात्र संपूर्ण जनमानस में आज भी जीवित किंवदंतियों के रूप में समाए हुए हैं। महाभारत के पात्र अब व्यक्ति नहीं चरित्र का रूप ग्रहण कर चुके हैं। बौद्ध परंपरा त्रिपिटक व जातक ग्रंथों की परंपरा सिद्ध साहित्य के रूप में पूर्वी भारत में दिखाई पड़ती है। जैन आगम साहित्य की परंपरा रास्य साहित्य के रूप में पश्चिमी भारतीय भाषाओं के साहित्य में पाई जाती है।केरल

के शंकराचार्य द्वारा प्रतिपादित अद्वैत दर्शन का प्रभाव निर्गुण-सगुण भक्तिसाहित्य में चारों ओर दिखाई पड़ता है। आदिकाल के वीरगाथात्मक रासो साहित्य का प्रभाव राजस्थान, गुजरात, दिल्ली तथा पश्चिमी उत्तरप्रदेश सहित कई राज्यों तक विस्तृत है।

भक्तिकाव्य परंपरा गुरुनानक (पंजाब), कबीर (पूर्वी भारत), नामदेव (महाराष्ट्र), चैतन्य (बंगाल), नरसी मेहता (गुजरात), शंकरदेव (असम), चैतन्य महाप्रभु, चंडीदास (बंगाल), ललद्दद (कश्मीर), मीरा (राजस्थान) इत्यादि भक्तों-संतों के साथ अखिल भारतीय क्षेत्र में पाई जाती है।इन भक्तों के प्रेरक रामानुज, रामानंद इत्यादि दक्षिण भारतीय संत रहे हैं। भागवत में भक्ति का उदय कर्णाटक प्रदेश से ही मान्य है। निर्गुण संतों द्वारा प्रतिपादित जाति-पाँत व बाह्याडंबरों का खंडन समग्र भारतीय जनमानस को उद्वेलित करके भारतीय मनीषा में मानव धर्म की संस्थापना में सफलता अर्जित करता है-"भक्तिकाव्य में स्पष्ट ही राष्ट्रीयता की कोई ऐसी चेतना नहीं है।पर भक्तिकाव्य हमारी राष्ट्रीयता का प्रमुख अंतःसाक्ष्य अवश्य है।आलवारों के काव्य से मध्यकाल में समूची भारतीय सर्जनात्मक क्षमता को उत्प्रेरित करने वाली वृत्ति भक्ति ही रही है।और इस स्तर पर संतों-सूफ़ियों-सगुण भक्त कवियों का काव्य अखिल भारतीय स्तर पर सामान्य जन के लिए शक्तिस्रोत रहा है। काव्य का ऐसा विराट, विस्तृत स्वरूप अन्यत्र आसानी से देखने में नहीं आता। "1

रीतिकाव्य की छवि श्रृंगारिकता की रही है।वहाँ पर आचार्यत्व प्रदर्शन व काव्यशास्त्र की अनुकरण पद्धति का निर्वहन हुआ है। जिसपर देशभर से आए संस्कृत काव्यशास्त्रीय आचार्य आनंदवर्धन, अभिनवगुप्त (कश्मीर), रामचंद्र-गुणचंद्र, वागभट्ट,अरिसिंह, अमरसिंह (गुजरात), जयदेव (बंगाल), विद्याधर, विद्यानाथ, विश्वनाथ,अप्पय दीक्षित,पंडितराज जगन्नाथ (दक्षिण भारत) का व्यापक प्रभाव रहा है।

आधुनिकता के निर्धारण में ब्रिटिश शासन व्यवस्था, पुनर्जागरण आंदोलन, राष्ट्रीय स्वातंत्र्य, उदारीकरण का आरंभ,सोशल मीडिया व इंटरनेट का आगमन इत्यादि प्रधान कारण रहे हैं। वर्तमान भारतीय ग्रामीण संरचना से शहरी संरचना का स्वरूप ग्रहण करने की ओर अग्रसर है।2011की जनगणना के आँकड़ों के अनुसार 31% आबादी शहरी हो चुकी है। आधुनिकता का प्रभाव हिंदी के भारतेंदु व द्विवेदीयुगीन साहित्य में राष्ट्रीय चेतना तथा मानवीय स्वातंत्र्य से आगे बढ़कर छायावाद में राष्ट्रीय स्वातंत्र्य का स्वरूप ग्रहण कर लेता है। संपूर्ण भारतीय भाषाओं के साहित्य में राष्ट्रीयता व मानवीय अधिकारों की बात साहित्य का प्रधान स्वर बन पड़ती है। प्रगतिशील आंदोलन की सामाजिकता व प्रयोगवादी आंदोलन की अतिशय वैयक्तिकता का रूपांतरण साठोत्तरी साहित्य में मोहभंग, बेचैनी, व्यवस्था विद्रोह का रूप हिंदी ही नहीं सभी भारतीय भाषाओं में समान रूप से लेता दिखाई पड़ता है।नवें दशक के पश्चात अस्मितामूलक विमर्शों से उपजी मानवीय मूल्यों की माँग व्यवस्था के परंपरागत स्वरूप के प्रति विद्रोह की ध्वनि हिंदी, मराठी, बंगाली, तमिल, उड़िया, कन्नड़, मलयालम सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य,कला माध्यमों, सांस्कृतिक चिंतन व जनजीवन में समान रूप से दिखाई पड़ती है।

दक्षिण भारतीय द्रविड़ भाषाओं का विकास अगस्त्य मुनि से मान्य है। मान्यता है कि शिव-पार्वती विवाह के समय सभी तपस्वी ऋषि-मुनि हिमालय पर्वत पर एकत्र हो गए। इसके कारण पृथ्वी का संतुलन बिगड़ गया।तब देवताओं की प्रार्थना पर भगवान शिव ने बायीं ओर अगस्त्य तथा दाहिनी ओर पाणिनी को खड़ा करके डमरू पर थाप दी।बायीं ओर की थाप से तमिल व्याकरण तथा दाईं ओर की थाप से संस्कृत व्याकरण बना। अगस्त्य ने उसी नाद पर आधारित तमिल व्याकरण अगस्त्यम् लिखा।जिसे उनके शिष्य ने तोल्काप्पियम् व्याकरण ग्रन्थ के रूप में व्यवस्थित किया। दक्षिण भारतीय लिपियों को भी ब्राह्मी से विकसित माना जाता है।

डॉ० रामविलास शर्मा ने 'हिंदी जाति की अवधारणा' तथा भारतीय भाषाओं के विकास पर व्यापक अध्ययन किया है।वे हिंदी जाति की अवधारणा प्रस्तावित करते हुए भाषाई संस्कृति की एकता का तथ्य प्रस्तुत करते हैं। उनके अनुसार आर्य व द्रविड़ परिवार की भाषाओं का विकास परस्पर संपर्क में ही हुआ है। दोनों भाषाओं के शब्दों में ध्वनिसाम्य तथा अर्थविकास की मिली-जुली प्रक्रिया दिखाई पड़ती है।पार्श्विक व टवर्गीय ध्वनियों को द्रविड़ों की देन माना जाता है।

अनुवाद के माध्यम से सभी भारतीय आर्यभाषाओं का साहित्य आज सुलभ है। शरतचंद्र, बंकिमचंद्र, रवीन्द्रनाथ टैगोर,विमल मित्र (बांग्ला), फकीर मोहन सेनापति (उड़िया), तुकाराम, एकनाथ,दया पँवार,शरण कुमार लिंबाले, प्रभाकर माचवे(मराठी), गुलेरी, सत्यदेव परिव्राजक, कृष्णा सोबती, अमृता प्रीतम (पंजाबी) महमूद फ़ाज़िल, दीनानाथ नाजिम(कश्मीरी), सुब्रमण्यम भारती, मीनाक्षी सुंदरम (तमिल), शिवमूर्ति, वेंकटशास्त्री (तेलुगू) डॉ० नागप्पा (कन्नड़), जी० शंकर कुरुप (

मलयालम) सभी की संवेदनात्मक धरातल पर साझी भारतीय संस्कृति ही है।आज की सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य में सामाजिक परिवर्तन का स्वर, अस्मितामूलक वैचारिकी, भ्रष्टाचार, व्यवस्था विद्रोह,पूँजीवाद का विरोध, पीड़ित-श्रमरत मानव इत्यादि वैशिष्ट्य हैं।विवेच्य है कि सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य का विकास लगभग एक ही साथ हुआ है।

भारत एक बहुभाषा-भाषी राष्ट्र है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343(1) के अनुसार संघ की राजभाषा हिंदी है।इसके साथ ही अन्य भारतीय भाषाओं को आठवीं अनुसूची में सम्मिलित करके उनके पठन-पाठन तथा विकास की सम्यक व्यवस्था की गई है। आधुनिक चिंतकों ने भारत के आधुनिक राष्ट्र-राज्य के रूप में उदय के तथ्य को भाषाई विविधता से भी जोड़ दिया है।वे मानते हैं कि अंग्रेजों के आगमन से पूर्व भारत एक राजनीतिक इकाई नहीं था। क्या भाषाई वैविध्य के कारण भारतीय नागरिक एक-दूसरे के संपर्क में नहीं थे।इस तथ्य को नकारते हुए डॉ० लक्ष्मीकांत पांडेय लिखते हैं कि- "अंग्रेजों से पूर्व क्या भाषाई एकता नहीं थी। व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को समझ नहीं पाते थे। धार्मिक तथा सांस्कृतिक स्थलों पर देश के विभिन्न भागों से व्यक्ति पर्याप्त संख्या में आवागमन के कष्टकर साधन होते हुए भी जाते थे और आज भी इन स्थलों पर जाकर भ्रांति का निराकरण आप ही हो जाता है।"2

भारतीय भाषाओं का साहित्य भंडार विपुल एवं समृद्ध है।यह साहित्य गुणवत्ता एवं प्रभाव की दृष्टि से विश्व के उत्कृष्टतम साहित्य के समान रहा है।बिहारी की समासोक्ति,सूर का बाल्य वर्णन, रामचरितमानस की लोकधर्मिता, रवीन्द्रनाथ ठाकुर की गीतांजलि की कोमलता, विश्व साहित्यकारों व आलोचना को समान रूप से प्रभावित करती है। भारतीय भाषाओं के साहित्य की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि एक रही है।इसके विपरीत इसमें आंचलिकता व स्थानीय चेतना के संरक्षण व संवर्धन का भाव समान रूप से प्राप्त होता है। इसलिए यह भारतीय साहित्य सभी भारतवासियों के मन में समान रूप से गौरव-बोध का भाव जाग्रत करता है।इस संदर्भ में कुछ तथ्य अवलोकन योग्य हैं, कुछ भारतीय भाषाओं में भाषा वैज्ञानिक साम्य है परंतु उनकी साहित्यिक प्रवृत्ति में विविधता भी दृष्टव्य है।इस दृष्टिकोण से असमी-बाग्ला,गुजराती-मराठी, हिंदी -उर्दू, तमिल व अन्य द्रविड़ भाषाओं के भाषा वैज्ञानिक तत्वों तथा साहित्यिक प्रवृत्तियों का अध्ययन एक रुचिकर तथ्य हो सकता है।यहां पर गुरुनानक हिंदी और पंजाबी में, प्रेमचंद -कृश्नचंदर हिंदी और उर्दू में , समान महत्व के साहित्यकार हैं।एक तथ्य यह भी ध्यातव्य है कि तमिल भाषा एवं साहित्य का विकास संस्कृत के समानांतर हुआ है।इन तथ्यों के आलोक में लक्ष्मीकांत पांडेय लिखते हैं कि-" भारतीय साहित्य में अनेकता के बावजूद एकता विद्यमान है।इसका कारण भारतीय संस्कृति है। " 3

प्राचीनकाल में संस्कृत का प्रयोग वृहत्तर भारत में था। द्रविड़ क्षेत्र में द्रविड़ भाषा का प्रयोग होता था।इन दोनों भौगोलिक क्षेत्रों के बीच सांस्कृतिक, साहित्यिक, आध्यात्मिक व्यक्तित्वों का आदान-प्रदान होता रहा है। शंकराचार्य, रामानुज, रामानंद इसी परंपरा को आगे बढ़ाते है। हिंदी के प्रथम कवि सरहपा उत्कल प्रदेश के निवासी थे। तमिल भाषा संस्कृत की समकालीन भाषा थी। इसलिए भारतीय साहित्य के मूल स्वरूप का अध्ययन तमिल व संस्कृत साहित्य के आलोक में किया जा सकता है। संस्कृत और तमिल को अमरभाषा कहा जाता है। तमिल व्याकरण ग्रन्थ तोल्काप्पियम् की रचना 1000 ई० पू० में हुई थी।इस सूत्रबद्ध व्याकरण को 'तमिल की अष्टाध्यायी' कहा जाता है। दोनों वैयाकरणों ने अपनी पूर्ववर्ती साहित्यिक परंपरा का वृहत् उल्लेख किया है। पाणिनि से पूर्ववैदिक परंपरा तथा तोल्काप्पियम् से पूर्व संगम साहित्य का विवरण मिलता है। भारतीय साहित्य की इस अंतरंगता पर डॉ० नगेंद्र की टिप्पणी है कि-" जिस प्रकार अनेक धर्मों, विचारधाराओं और जीवन प्रणालियों के रहते हुए भी भारतीय संस्कृति की एकता असंदिग्ध है इसी प्रकार और इसी कारण से अनेक भाषाओं और अभिव्यंजना पद्धतियों के रहते हुए भी भारतीय साहित्य की मूलभूत एकता का अनुसंधान भी सहज संभव है।" 4

भारतीय साहित्य के विकासक्रम का अवलोकन करने पर भी समान प्रवृत्तियों के दर्शन होते हैं। चौरासी सिद्धों व नौ नाथों का प्रसार संपूर्ण भारत में था। भारतीय तंत्रसाधना शिव को आदिनाथ मानती है। गोरखपुर, कामरूप, उत्कल उसके प्रधान केंद्र थे। तमिल के नायनमारों व कन्नड़ के वीरशैववादी वशवेश्वर शैव कवि थे। तेलुगू के नवनाथचरितम् में नाथों का वर्णन है।स्वयं गोरखनाथ ने भी मराठी भाषा में लिखा है।सिद्धों का प्रभाव पूर्वी भारत में तथा जैनियों का प्रभाव पश्चिमी भारत में दिखाई पड़ता है।चारणकाव्य की प्राचीनतम परंपरा तमिल साहित्य में दिखाई पड़ती है। तमिल का संगम साहित्य मूलतः चारणकाव्य का ही एक रूप है।मराठी के पँवाड़े भी वीर काव्य की परंपरा में आते हैं। तमिल के शिलप्पादिकारम्, तेलुगू का यलनाटिवीरचरित्रम्, मलयालम का पझपाट्टकल, गुजराती का रणमल्ल छंद,कान्हड़ दे प्रबंध

वीरकाव्य की रचनाएँ हैं।

संत काव्य का उदय दक्षिण भारत से हुआ था। तमिल के संतकवि, तेलुगू में वेमन,कन्नड़ में सर्वज्ञ,मराठी के नामदेव, एकनाथ, वारकरी संप्रदाय के कवि , गुजरात के सहजानंद,बंगला के बाउलगीत गायक, कबीर,भीखा,दादू,रविदास,एक ही सामाजिक -आध्यात्मिक पृष्ठभूमि से आते हैं।प्रेमाख्यान काव्यपरंपरा हिंदी के सूफ़ी कवियों के अतिरिक्त पंजाबी के युसुफ़-ज़ुलेखा, गोपीचंद,मृगांकवती,माधवानल कामंदकला,हीर-राँझा,लैला-मज़नूँ,शीही-फ़रहाद,नल-दमयंती,सोहिनी-माहिवाल, तेलुगू के राजशेखरचरित्रम्,प्रभावती-प्रद्युम्नम्,गुजराती के हंसावलि,विद्या विलासिनि,ढोल-मारू-रा-दूहा,बंगला के विद्या सुंदर में दिखाई पड़ती है। हिंदी को इन सभी भारतीय भाषाओं की संवेदना की प्रतिनिधि भाषा कहा जा सकता है। हजारी प्रसाद द्विवेदी का हवाला देते हुए रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं कि-" समग्र भारतीय साहित्य में हिंदी ही एकमात्र ऐसी भाषा है जिसमें पश्चिमी आर्यों की रूढ़िप्रियता,कर्मनिष्ठा के साथ ही पूर्वी आर्यों की भावप्रवणता,विद्रोही वृत्ति और प्रेम निष्ठा का मणिकांचन योग हुआ है।" 5

वैष्णव काव्यपरंपरा का विस्तार भी पूर्ण भारत में पाया जाता है। तमिल का भक्तिकाव्य नालायिरप्रबंधम् उल्लेखनीय है।जिसके रचनाकार 12आलवार संत हैं। तेलुगू में राम काव्य की वृहत् परंपरा भक्त त्यागराज, रंगनाथ रामायण,भास्कर रामायण और रामायणम् में दिखाई पड़ती है। कन्नड़ में मौलिक ग्रंथ सहित रामायण,भागवत के अनुवाद भी मिलते हैं। मलयालम में कण्णश रामायणम्, अध्यात्म रामायण प्रमुख हैं। मराठी में तुकाराम के अभंग, गुजराती में नरसी मेहता,विष्णुदास, प्रेमानंद सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं।ब्रजबुलि का विस्तार बंगाल, उड़ीसा व असम तक था। इसमें चरित काव्य तथा गीतिकाव्य कृष्णकथा को आधार बनाकर लिखे गए हैं।मुरारिगुप्त,नरहरि सरकार, रामानंद बसु, वासुदेव घोष,गीतिकाव्य की परंपरा में आते हैं। बंगाल का सहजिया संप्रदाय राधा-कृष्ण की प्रेमसाधना के लिए विश्रुत है।बंगला में व्यास रामायण, असमिया में शंकरदेव,माध्वदेव,रामकथा काव्य परंपरा से संबद्ध हैं। रामायण व महाभारत के आख्यान पर आधारित रचनाएँ सभी भाषाओं में उपलब्ध हैं। रामायण पर आधारित ग्रंथों में प्रमुख हैं- तमिल (कंब रामायण), तेलुगू (रंगनाथ रामायण, भास्कर रामायण), कन्नड़(पंप रामायण), मलयालम (अध्यात्म रामायण), मराठी (रामकथा), बंगला (कृत्तिवास रामायण), असमिया (माधव अंजलि कृत रामायण) उड़िया (विलंका रामायण,बलराम दास कृत रामायण), हिंदी (तुलसी कृत रामचरितमानस) आदि।इसी तरह महाभारत आधारित प्रमुख ग्रंथ हैं- तेलुगू (नन्नय,तिक्कन,एर्रन),कन्नड़(पंप कृत् महाभारत, कुमार व्यास कृत महाभारत), मलयालम (एजतुच्चन कृत महाभारत),मराठी (श्रीधर कृत पांडवप्रताप), बंगला(महाभारत के तीस से अधिक अनुवाद), उड़िया (सरलादास कृत महाभारत), पंजाबी (कृष्णलाल का अनुवाद), हिंदी (सबल सिंह चौहान का पद्यानुवाद) आदि।

वर्तमान भारतीय साहित्य की सामान्य प्रवृत्तियों के रूप में जिनकी पहचान की जाती है,उसका प्रभाव संपूर्ण भारतीय साहित्य में दिखाई पड़ता है। प्रत्येक भारतीय भाषा के साहित्य में सामाजिक न्याय की माँग प्रधान स्वर बन पड़ा है। नब्बे के दशक के पश्चात सामाजिक अधिकारों के प्रश्न पर विभिन्न वर्ग अपनी ज्वलंत माँगें राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में सामने ला रहे हैं। अस्मितामूलक वैचारिकी सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य में प्रधान स्वर हो गया है। दलित, स्त्री,किन्नर,वृद्ध, प्रवासी इत्यादि समूह ऐतिहासिक विकास प्रक्रिया में अपने साथ हुए अन्याय का हवाला देते हुए संवैधानिक अधिकारों के माँग के रास्ते पर चल पड़े हैं। वर्तमान भारतीय साहित्य में केन्द्रीय विधान के रूप में कथा साहित्य का महत्व बढ़ा है। उपन्यास व कहानी विधा गंद्य की केंद्रीय विधा बन चुकी हैं। भारतीय भाषाओं के साहित्य में भ्रष्टाचार,राजनीतिकों, तथा पूँजीवादी शक्तियों के विरुद्ध वातावरण बन चुका है। स्थान एवं भाषाई विभेद के इतर व्यवस्था विद्रोह, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी इत्यादि विषय जनोन्मुखी साहित्य का स्वर बन चुके हैं।

आज का भारतीय साहित्य अपने परिवेश और प्रकृति की सहज अभिव्यक्ति है। भारतीय साहित्यकार नवीनता, तात्कालिकता,और समसायिकता के आग्रहवश देश और काल की समस्यायों पर सुचिंतित दृष्टि से संपन्न हैं। उनके काव्य में उदात्त संवेदना और मानव मूल्यों के बदलाव की चेतना दिखाई पड़ रही है। प्रेम और प्रकृति के प्रति साहित्यकारों की नवीन दृष्टि का विकास हो रहा है। बंगाल की भूखी पीढ़ी और हिंदी की अकविता का प्रधान स्वर एक हो उठा है।यहाँ पर नकार का स्वर प्रधान हो चुका है। पश्चिमी वैचारिकी का प्रभाव,लोक संपृक्ति का भावावेशमयी माधुर्य,अनिश्चय व अविश्वास की ध्वनि, अनुभूति की प्रामाणिकता,और नये शिल्प की तलाश साहित्य का प्रधान स्वर बन पड़ा है।

भारतीय साहित्य की अवधारणा पर चिंतन करने वाले हिंदी आलोचकों में रामविलास शर्मा प्रमुख हैं।भारत में अँग्रेजीराज और मार्क्सवाद, भारतीय साहित्य की भूमिका, भारतीय संस्कृति और हिंदी प्रदेश, भाषा और समाज, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण इत्यादि पुस्तकों में उनके भारतीय साहित्य विषयक मत प्रकट हुए हैं।ये पुस्तकें हिंदी साहित्य में नवीन अवधारणाओं की प्रस्तावक मानी जाती हैं।उनका इतिहास, संस्कृति, भाषा तथा दर्शन पर व्यापक अध्ययन है। भारतीय संस्कृति और हिंदी प्रदेश, ऐतिहासिक भाषाविज्ञान और हिंदी भाषा,मार्क्स और पिछड़े हुए समाज, भारतीय साहित्य की भूमिका, भारतीय इतिहास की समस्याएँ,आज के सवाल और मार्क्सवाद, भारतीय नवजागरण और यूरोप, पश्चिमी एशिया और ऋग्वेद,इतिहास दर्शन,मानव सभ्यता का विकास,गाँधी , अंबेडकर और लोहिया इत्यादि पुस्तकों में प्रकट मत से यह स्पष्ट होता है कि वे भारतीय जनता के समग्र सरोकारों से जुड़े लेखक थे। डॉ० रामविलास शर्मा यहाँ की जातीय संस्कृति और जातीय भाषा के द्वैत की समाप्ति के पक्षधर थे।वे इसका आशय अंग्रेजों की हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिकता की नीति से भी जोड़कर विश्लेषित करते हैं-"राष्ट्र के अस्तित्व के लिए एक ही भाषा का व्यवहार आवश्यक नहीं है। संसार के अधिकांश राष्ट्र बहुजातीय हैं, उनमें अनेक भाषाओं का व्यवहार होता है।"6

रामविलास शर्मा ने अपने चिंतन में औपनिवेशिक काल को केंद्र में रखा है।वे औपनिवेशिक ज्ञानकांड का समग्र प्रतिरोध करते हैं। इसलिए उन्होंने सबसे पहले हिंदी नवजागरण की अवधारणा प्रस्तावित की। इसके बाद इसका विस्तार भारतीय नवजागरण की वेद-उपनिषद से लेकर भक्तिकाल और आधुनिक युग तक दिखलाते हैं।वे भारतीय सभ्यता व संस्कृति को अँग्रेजी सभ्यता व संस्कृति से हीन नहीं मानते हैं।वे समय-समय पर सम्मिलित हुई बुराइयों को दूर करने के लिए धर्म और समाज की कुरीतियों का रहस्योद्घाटन करते हैं। यूरोपीय जगत में सभ्यता-संकट तथा सभ्यता के अंधकार काल में ही भारत में अनेक नवजागरण घटित हो चुके थे। भारतीय नवजागरण का प्रकाश दूर-दूर तक फैला हुआ था।जिसका रूपांतरण सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य में दिखाई पड़ता है।नामवर सिंह ने 'इतिहास की शव-साधना' शीर्षक निबंध में लिखा है कि-" नवजागरण की एक बहुत बड़ी देन संभवतः वह इतिहासदृष्टि है जिसमें अपने अतीत को शत्रु से मुक्त करके उसके विरुद्ध वर्तमान में इस्तेमाल करने की कला आती है और भविष्य के लिए एक स्वप्न दृष्टि भी मिलती है।" 7

रामस्वरूप चतुर्वेदी ने 'हिंदी साहित्य व संवेदना का विकास ' में हिंदी साहित्य व समस्त भारतीय भाषाओं के अंतर्विरोध व सामंजस्य सूत्रों को तलाशने का कार्य किया है।वे इसे भाषाई, सांप्रदायिक, क्षेत्रीय वैविध्य के पहलू से अवलोकित करते हैं।वे भारतीय भाषाओं के साहित्य में अंतर्विरोध की पहली बड़ी पहचान करते हुए लिखते हैं कि इतिहास का यह कुरूप और रोचक अंतर्विरोध है कि 'तराना-ए- हिंदी" के गायक " कुछ बात है कि हस्तीं मिटती नहीं हमारी" का बयान करने वाले इकबाल पाकिस्तान की योजना के आरंभिक प्रस्तावक सिद्ध होते हैं।वे अंतरृविरोधों की उपस्थिति और उसका समन्वय संस्कृति का लक्षण मात्र मानते हैं।वे इसकी व्याख्या में शुक्लजी के विरुद्धों का सामंजस्य सूत्र की सहायता से समन्वय को हिंदू और हिंदुस्तान की संस्कृति का मूलतत्व घोषित करते हैं-" यों अंतर्विरोधों का होना और उसका सामंजस्य एक प्रकार से संस्कृति मात्र का लक्षण है,उसकी जीवंतता का प्रमाण है।"8

भारतीय भाषा व संस्कृति में यह सामंजस्य शक्ति क्यों आती है।इसका उत्तर देते हुए वे लिखते हैं कि यहाँ धर्म विशेष व व्यक्ति विशेष पर आस्था को सीमित कर देने का उपदेश नहीं है।यहाँ आस्तिक-नास्तिक, ब्राह्मण -शैव-शाक्त, मूर्तिपूजक -प्रतिमाभंजक सभी सम्मिलित रहे हैं। इसलिए अंतर्विरोधों का उपजना स्वाभाविक है। वहीं भारतीय हिन्दू मानस उसके शमन को भी मानस में ग्रहण करता चला है।जिसका प्रभाव भारतीय भाषाओं के समग्र साहित्य में दिखता है।

रामस्वरूप चतुर्वेदी जी भारतीय हिन्दू मानस के अंतर्विरोधों की आध्यात्मिक भावभूमि का उल्लेख करते हुए लिखते हैं कि यहां सूक्ष्म अद्वैत दर्शन और जाति व्यवस्था का आरंभ से ही सह-अस्तित्व रहा है एक ही ब्रह्मसत्ता की विविधरूपा अभिव्यक्ति को जातियों के मकड़जाल और वर्गीकरण के विषय में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी इसका रोचक अध्ययन किया है।वे भारतीय समाज में जातियों की अनंत राशि की ओर संकेत करते हुए लिखते हैं कि हिंदू समाज में नीची से नीची जाति भी अपने से नीची जाति ढूँढ़ लेती है।इन तथ्यों के इतर भारतीय नागरिक में भारतीयता के तंतु कहीं भी कमजोर पड़ते दिखाई नहीं देते हैं।प्रो० रामस्वरूप चतुर्वेदी इसपर टिप्पणी करते हैं कि-" तो एकत्व का परमरूप अद्वैत और वैविध्य की बहार जातिप्रथा में,ये दोनों छोर हिंदू व्यवस्था में बड़े इत्मीनान के

साथ समाज हुए हैं।इसी तरह दैवविधान और कर्म का महत्व यहाँ के दर्शन में एकसाथ आते हैं।" 9

यही अंतर्विरोध व सामंजस्य भारतीय काव्यशास्त्र में भी दिखाई पड़ता है।रस चिंतन का सूक्ष्म सिद्धांत व ध्वनि और अलंकार का स्थूल विभाजन और वर्गीकरण एक साथ विवेच्य है। साहित्य की रचनाप्रक्रिया में भी यही विरोधाभास दिखाई पड़ता है।एक ओर रामायण की आदर्श चरमगाथा है दूसरी ओर महाभारत का यथार्थ नग्न रूप। दोनों में कथा का मूलढाँचा भाइयों के त्याग व स्वार्थ के दो परस्पर विरोधी बिंदुओं को समेटे हुए है।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में यह अंतर्विरोध प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक काल तक विस्तृत है। प्राचीन भारतीय विधि के प्रणेता मनु महाराज हैं।वे अपनी व्यवस्था में अंत्यजों को कोई स्थान नहीं देते हैं। वहीं आधुनिक भारतीय विधि के प्रणेता अंबेडकर जी के विधान में द्विजों का पूर्ण स्थान है।यहाँ पर आर्य व आर्येतर संस्कृति, आगम, बौद्ध, जैन, द्रविड़ संस्कृति एक साथ विकसित हुई है।

उपर्युक्त वैविध्य के कारण हिंदी संवेदना बोलियों व भाषाओं के वैविध्य से जूझती रही है। आदिकाल के पश्चात आधुनिकाल में साहित्यिक भाषा खड़ी बोली के आधार पर विकसित होती है।खड़ीबोली मूलरूप से पछाँह की बोली है। इसमें साहित्यकारों की सर्वाधिक संख्या भोजपुरी क्षेत्र से है। भारतेंदु, हरिऔध, प्रसाद, प्रेमचंद, रामचंद्र शुक्ल, हजारी प्रसाद द्विवेदी दिनकर,रेणु,सभी भोजपुरी क्षेत्र से रहे हैं। मैथिलीशरण गुप्त, वृंदावन लाल वर्मा बुंदेली क्षेत्र के हैं। सुमित्रानंदन पंत कुमायुँनी के हैं। महावीर प्रसाद द्विवेदी,भगवतीचरण वर्मा, बच्चन अवधी क्षेत्र के हैं।खड़ी बोली के साहित्यकारों में जैनेन्द्र कुमार का नाम आता है। इस प्रकार समस्त आर्यभाषा क्षेत्र हमेशा द्विभाषा-भाषी रहा है।यह समंजन हिंदी की बोलियों में भी दिखाई पड़ता है।

डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी ने 'हिंदी साहित्य व संवेदना के विकास' में हिंदी साहित्य की मिश्रित संवेदनात्मक पृष्ठभूमि का विशद विवेचन किया है।वे धर्म,भाषा,जाति के वैविध्य को अंतर्विरोधों का सामंजस्य नाम देते हैं।यहाँ जार्ज ग्रियर्सन के 'भाषा सर्वेक्षण' का हवाला देते हुए कहते हैं कि गंगा के समस्त काँठे व बंगाल तथा पंजाब के साहित्य व भाषा में समानता होने पर भी भाषा वैज्ञानिक तत्वों में अंतर की व्यापकता चौंकाती है।इस आधार पर रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं कि-" हिंदी संवेदना सीधे-सरल रूप में बहुत कम विकसित हुई है।आदिकालीन कवि धार्मिकता और ऐहिकता,वीर और श्रृंगार, ईश्वरत्व और मनुष्यत्व के द्वंद्वों का समाहार करने में संलग्न दिखाई देता है।और यह समाहार अंतहीन प्रक्रिया है- 'द्वंद्वों का उद्गम तो सदैव शाश्वत रहता वह एक मंत्र।' अंतर्द्वंद्वों से जूझके जिस भारतीय मानस की बात आरंभ में कहीं गई थी, हिंदी का कवि उसका अच्छा उदाहरण पेश करता दिखता है। भारतीय संस्कृति सामासिक है क्योंकि वहाँ कई जनपदों की बोलियां और क्षेत्रीय विशेषताएँ समरस हुई हैं। वैविध्य और समरसता जैसे यही इस पूरी सांस्कृतिक विकास-प्रक्रिया का मूलस्रोत हो।"10

भारतीय राष्ट्र- राज्य की लोकतांत्रिक-संवैधानिक अवधारणा ने भी भारतीय संवेदना की साझी विरासत को समृद्ध किया है। भारतीय संविधान एकात्मकता की ओर झुकें संघात्मक गणराज्य की स्थापना करता है। अखिल भारतीय सेवा, केंद्रीय विद्यालय, नवोदय विद्यालय, भारतीय सेना व अन्य संपर्क माध्यमों ने भारतीय जन-मन को एक-दूसरे के अतीव निकट ला दिया है। आज सभी महानगरों में देश के सभी क्षेत्रों के लोग बड़ी संख्या में सौहार्द के साथ रह रहे हैं ।जिसके बीच संस्कृति व संवेदना के परस्पर आदान-प्रदान से साझी संस्कृति व संवेदना विकसित हो रही है।जिसे हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य में परिलक्षित किया जा सकता है। चंडीदास के शब्दों में कहा जाय तो समस्त भारतीय साहित्य में मानुष सत्य की ही स्थापना हुई है।

निष्कर्ष:- भारतीय गणराज्य 28 राज्यों व 8 केंद्रशासित क्षेत्रों के साथ एक बड़ी भौगोलिक इकाई है। जिसमें पर्वतीय शिखर,विशाल मैदान,रेगिस्तान,पठार व समुद्रतटीय क्षेत्र की भौगोलिक विविधता है।यहाँ पर भाषाएँ 'चार कोस पर पानी बदले, चार कोस पर बानी ' के अनुरूप विविधता से परिपूर्ण हैं। भाषाओं और बोलियों की बहुरंगी छटा है। भाषा वैज्ञानिकों,नृ-तत्वविदों, इतिहास के विचारकों के लिए अध्ययन की समृद्ध डायस्पोरा यहाँ दिखती है।जिसके कारण कतिपय चिंतक भारत के एक राष्ट्र की संकल्पना पर प्रश्न उठाते रहे है परंतु आसमुद्र-हिमालय भारतीय जन-मन सभ्यता के उदयकाल से ही एक रहा है। जिसकी सौंदर्यमयी परिणति भाषाओं के साहित्य व संवेदना में भी प्रतिफलित होती है।

संदर्भ सूची:-

1- भक्ति काव्ययात्रा, रामस्वरूप चतुर्वेदी,लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज,पहला संस्करण-पहली आवृत्ति -2024 पृ०-10.

2- भारतीय साहित्य, डॉ० लक्ष्मीकांत पांडेय व डॉ० प्रमिला अवस्थी, आशीष प्रकाशन, कानपुर संस्करण-2015,पृ०- 33.

3- भारतीय साहित्य, डॉ० लक्ष्मीकांत पांडेय व डॉ० प्रमिला अवस्थी, आशीष प्रकाशन, कानपुर,संस्करण-2015, पृ०-33.

4- भारतीय साहित्य, डॉ० लक्ष्मीकांत पांडेय,व प्रमिला अवस्थी, आशीष प्रकाशन, कानपुर, संस्करण -2015, पृ०-39.

5- इतिहास और आलोचक दृष्टि, रामस्वरूप चतुर्वेदी,लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज ,तृतीय संस्करण-2024,पृ०-20.

6- भारतीय साहित्य के इतिहास की समस्याएँ, डॉ० रामविलास शर्मा,वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली,संस्करण -2012,पृ०-69.

7- आज के सवाल और मार्क्सवाद, डॉ० रामविलास शर्मा,स्वराज प्रकाशन,नई दिल्ली,संस्करण-2001,पृ०-415.

8- हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज,उन्तीसवाँ संस्करण-2022,पृ०-16.

9- हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी,लोक भारती प्रकाशन, प्रयागराज,उन्तीसवाँ संस्करण-2022,पृ०-16.

10- हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन प्रयागराज,उन्नीसवां संस्करण, पृ०- 23.